Anveshan (अन्वेषण): A Multidisciplinary Journal in Hindi
Vol. 5, Issue 1 – 2021
ISSN: 2581-4044

'योग की साधना पद्धति' अष्टांग योग मार्ग

डॉ0 गौरव कुमार मिश्र[1]

[1]सहा0 प्राध्यापक, राजनीतिशास्त्र विभाग, शासकीय रामानुज प्रताप सिंहदेव, स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बैकुण्ठपुर, जिला- कोरिया (छ.ग.)

सारांश

कोविड-19 के महामारी के इस दौर में आज पूरा विश्व पीड़ित है। इस दौर में आज हमें फिर से संयमित व अनुशासित जीवन पद्धति की, मानसिक व शारीरिक स्वास्थ्य की आवश्यकता एवं उपादेयता इस संकट से निराकरण में आवश्यक प्रतीत हुई है जिसने इस महामारी में लड़ने में हमें काफी मदद की है। संयमित व स्वस्थ जीवनशैली हेतु महर्षि पतंजलि की अष्टांग योग पद्धति हमेशा से प्रासंगिक है।

भारतीय विचारधारा में योग का अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है। भारतीय परम्परा में चार्वाक के अतिरिक्त सभी दार्शनिक सम्प्रदाय आत्मसाक्षात्कार या मोक्ष की प्राप्ति हेतु योग साधना की आवश्यकता को निर्विवाद रूप से स्वीकार करते है। यद्यपि भारतीय परम्परा में योग साधना का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है, उपनिषद, महाभारत, भगवद्गीता, जैन एवं बौद्ध मतों में योग संबंधी क्रियाओं का विवेचन प्राप्त होता है, तथापि सर्वप्रथम महर्षि पतंजलि ने ही सुसम्बद्ध दार्शनिक सिद्धान्त के रूप में योग का विवेचन किया। इसलिए महर्षि पतंजलि को योग दर्शन का प्रतिष्ठापरक आचार्य माना जाता है। उन्होने उस अस्पष्ट परम्परा को जो जीवन तथा अनुभव के दबाव से विकसित हुई, एक विधान का रूप दिया। इसमें तपस्या तथा गहन चिन्तन विषयक उन विचारों का निचोड़ पाया जाता है, जो उस समय अस्पष्ट और अनिश्चित रूप से विद्यमान थे।

भारतीय विचारधारा में योग शब्द का प्रयोग विभिन्न अर्थों में किया गया है। कभी-कभी इसका अर्थ संयोजित करने के अर्थ में, परामात्मा से जीवात्मा के मिलन के अर्थ में होता है। तो भगवद्गीता में योग को कर्म में कुशलता प्राप्त करना (योगः कर्मसु कौशलम्), समत्वभाव (समत्वं योगरुच्यते), ब्रम्हभाव आदि से लिया गया है। किन्तु पंतजलि योग दर्शन में योग का अर्थ-मात्र 'जुड़ना' (एकत्व) नहीं है बल्कि यह 'प्रयत्नमात्र' है। इसका अर्थ प्रयत्न है, कठोर परिश्रम है, इन्द्रियों तथा मन का निग्रह है। कभी- कभी पंतजलि दर्शन में योग का अर्थ

© Eureka Journals 2021. All Rights Reserved.

Vol. 5, Issue 1 – 2021
ISSN: 2581-4044

'समाधि' किया गया है। (योगः समाधिः)। किन्तु प्रायः इसका अर्थ समाधि तक पहुंचने के मार्ग के लिए हुआ है।

पतंजलि के अनुसार योग 'चित्तवृत्तियों का निरोध' भी है। इसके अनुसार मानवीय प्रकृति के भिन्न- भिन्न तत्वों के नियंत्रण द्वारा कैवल्य-प्राप्ति के लिए किया गया विधिपूर्वक प्रयत्न ही योग है। वस्तुतः पतंजलि के येग सूत्र का मुख्य उद्देश्य किसी आध्यात्मिक सिद्धान्त का प्रतिपादन करना नहीं है, बल्कि यह सुनिश्चित करना है कि किस प्रकार संयमी जीवन द्वारा कैवल्य-प्राप्त किया जा सकता है। पतंजलि के अनुसार कैवल्य का एकमात्र उपाय चित्तवृत्तियों का निरोध है और यही योग है (योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः)।

चित्तवृत्तियों के निरोध के लिए योग दर्शन, साधना पद्धति के आठ सोपान है। इसीलिए उसे 'अष्टांग योगमार्ग' कहते है। इसके ये आठ अंग निम्न लिखित है- यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। इसमें प्रथम दो (यम और नियम) नैतिक साधना पर बल देते है। आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार का उद्देश्य चित्त को बाह्य विषयों से हटाना है। धारणा, ध्यान और समाधि एकाग्रता के विभिन्न रूप हैं और इनका लक्ष्य चित्त का निरोध करना है। इसके साथ ही इनमें प्रथम पांच (यम, नियम, आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार) योग के बहिरंग साधन है तथा अन्तिम तीन (धारणा, ध्यान और समाधि) योग के अन्तरंग साधन हैं, जिससे मनुष्य की सभी प्रवृत्तियों का एकाकार हो, कैवल्य की प्राप्ति सम्भव होती है। योग के आठों अंगों का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत है-

यम- शरीर, मन और वाणी के संयम यम कहलाता है। यम अधिकांशतः निषेधात्मक आदर्श है। इनकी पालन सार्वभौम धर्म है। इसमें जातिभेद, देशभेद, आयुभेद यवं अवस्थाभेद के कारण कोई अपवाद नहीं हो सकता। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रहमचर्य एवं अपरिग्रहका पालन यम के अंतर्गत आता है। इन्हें निम्न प्रकार से स्पष्टतः समझा जा सकता है-

अहिंसा- यमों के वर्ग में अहिंसा सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इसे यमों का प्रारम्भ और अन्त दोनों कहा गया है। अन्य सभी यम अहिंसा में ही बद्धमूल हैं। विस्तृत अर्थ में अहिंसा से तात्पर्य प्रत्येक समय में मनसा, वाचा, कर्मणा सभी जीवित प्राणियों के प्रति द्वेषभाव यवं हिंसा के परित्याग से है।

सत्य- सत्य से तात्पर्य मिथ्या वचन के परित्याग करने से है। यथानुभूत, यथादृष्ट एवं आप्त पुरूषों से यथाश्रुत तथ्य का उसी प्रकार कथन करना सत्य है।

अस्तेय- चौरवृत्ति का परित्याग या दूसरों के धन को न चुराना अस्तेय है।

© Eureka Journals 2021. All Rights Reserved.

ब्रहमचर्य- मन, वाणी एवं कर्म से काम-सुख या स्त्री-प्रसंग का परित्याग ब्रहमचर्य है।

अपरिग्रह- आवश्यकता से अधिक धन का संचय न करना अपरिग्रह है।

नियम- भावात्मक सद्गुणों का अभ्यास नियम कहलाता है। यद्यपि ये विषय ऐच्छिक हैं, तथापि योग-साधना के मार्ग का अवलम्बन करने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए इनका अभ्यास आवश्यक है। इसके अन्तर्गत शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान आते हैं।

शौच- बाहयशरीर की स्नान आदि द्वारा शुद्धि तथा करूणा, मुनिता आदि गुणों से चित्त की शुद्धि।

सन्तोष- समुचित प्रयास से जो भी प्राप्त हो उसे पर्याप्त मानना।

तप- शीतोष्ण सहन करने का अभ्यास, कठिन व्रत का आदि का पालन।

स्वाध्याय- धर्मग्रन्थों एवं श्रुतियों का अध्ययन करना।

ईश्वर-प्रणिधान- ईश्वर का ध्यान करना।

यम और नियम को योगदर्शन का 'दस महादेश' कहा जा सकता है। इनकी प्रवृत्ति सामान्यतः वैराग्य की ओर है। यम और नियम का आचरण योगाभ्यास के लिए आवश्यक है।

आसन- यह शरीर का संयम है। चित्त की एकाग्रता के लिए शरीर का अनुशासन भी उतना ही आवश्यक है जितना मन का। आसन का अर्थ है, शरीर को ऐसी स्थिति में रखना जिससे निश्चल होकर देर तक सुखपूर्वक रह सकें। योगिक साधना के लिए शरीर का स्वस्थ होना आवश्यक है। आसन शरीर को स्वस्थ रखते हैं। वस्तुतः शरीर को सुख देने वाले तथा चित्त को स्थिर रखने वाले तरीके ही आसन हैं। योग दर्शन में पद्मासन, गरूणासन, मयूरासन इत्यादि अनेक आसनों की चर्चाएं प्राप्त होती हैं।

प्राणायाम- प्राणायाम प्राण-वायु का संयम है। पतंजलि ने इसे ऐच्छिक साधन ही माना है, किन्तु परवर्ती भाष्यकारों ने इस पर पर्याप्त बल दिया है। इस क्रिया के तीन अंग हैं-पूरक, कुम्भक और रेचक। इसके अन्तर्गत क्रमशः नियमपूर्वक श्वाँस खींचना, कुछ देर स्थिर रखना और श्वाँस छोड़ना आदि क्रियाएं आती हैं। श्वाँस-प्रश्वास सम्बन्धी व्यायाम को आधुनिक योग में भी स्वास्थ्य के लिए उपयोगी माना जाता है, किन्तु शारीरिक दुर्बलता में प्राणायाम घातक भी हो सकता है।

© Eureka Journals 2021. All Rights Reserved.

Vol. 5, Issue 1 – 2021
ISSN: 2581-4044

प्रत्याहार- इन्द्रियों को बाह्य विषयों से हटाना प्रत्याहार कहलाता है। यह इन्द्रियों का संयम है। इन्द्रियाँ स्वभाव से ही बहिर्मुखी होती हैं। उनकी बहिर्मुखी वृत्ति को अन्तर्मुखी बनाना प्रत्याहार है।

धारणा- किसी स्थान विशेष पर चित्त को स्थिर करने को धारणा कहते हैं। यह मन की स्थिरता है। योग दर्शन में धारणा के लिए अनेक स्थान बताये गए हैं; जैसे, नाभिचक्र, नासिका, जिह्वा का अग्रभाग, हृदय-पुण्डरीक, अक्षिपुतलिका आदि। धारणा का विषय बाह्य पदार्थ हो सकता है। जैसे किसी देवता की प्रतिमा आदि। वस्तुतः चित्त को एकाग्र करने की शक्ति ही योग की असली कुंजी है। इसको सिद्ध करने वाला साधक ही समाधि की अवस्था तक पहुँच सकता है।

ध्यान- ध्यान का लक्षण एकाग्रता है। इसका अर्थ है, ध्येय वस्तु का निरन्तर मनन, ध्येय विशेष को लेकर विचार का अनवच्छिन्न प्रवाह। ध्यान में एक समय में एक ही ज्ञान का प्रवाह होता है और वह अन्य प्रकार के ज्ञान से मिश्रित नहीं होता। इसमें केवल ध्येय-विषय प्रकाशित होता है। जब ध्यान अभ्यन्तर या बाह्य विषयों की ओर प्रेरित होता है तब असाधारण शक्तियाँ (सिद्धियाँ) प्राप्त होती हैं। मुमुक्षु को इस स्थिति से सावधान रहना चाहिए, क्योंकि वह इन सिद्धियों के प्रलोभन में पड़कर अपने उद्देश्य से भटक सकता है। ध्यान ही पराकाष्ठा पर पहुँचकर समाधि में परिवर्तित हो जाता है जहाँ अभिज्ञा का भाव लुप्त हो जाता है।

समाधि- यह योग की साधना का लक्ष्य है, क्योंकि यह पुरुष को उसके कालिक, सोपाधिक तथा परिवर्तनशील जीवन से ऊपर उठाकर एक सरल, नित्य तथा पूर्ण जीवन उपलब्ध कराता है। यह उस दशा का नाम है जिससे होकर कैवल्य के पूर्व गुजरना पड़ता है। दस अवस्था में बाह्य जगत के साथ जीव का सम्बन्ध टूट जाता है और वह पुनः अपने स्वरूप को, नित्य पद को प्राप्त कर लेता है। समाधि कोई सरल अनुभव नही है जो उपस्थितिकाल में एक समान है। यह ऐसी मानसिक अवस्थाओं की श्रृंखला है जो अधिकाधिक सरल होती हुई अन्ततः अचेतन अवस्था में परिणत हो जाती है।

समाधि दो प्रकार की होती है-संप्रज्ञात और असंप्रज्ञात

सम्प्रज्ञात समाधि- सम्प्रज्ञात समाधि में केवल ध्येय विषय का ज्ञान होता है। इसमें ध्येय विषय के अतिरिक्त अन्य सभी विषयों का अभाव होता है। इसमें चित्त ध्येय विषय में लीन होकर ध्येय विषयाकार हो जाता है। चूँकि इसमें आलम्बन रूप में कोई न कोई ध्येय विषय उपस्थित रहता है, अतः इसे सबीज समाधि कहते हैं। इस अवस्था में चित्त निर्वात दीपशिखा

© Eureka Journals 2021. All Rights Reserved.

Anveshan (अन्वेषण): A Multidisciplinary Journal in Hindi
Vol. 5, Issue 1 – 2021
ISSN: 2581-4044

के समान एक ही भाव में प्रवाहित होते हुए रजोगुणजन्य मैल का परित्याग करके सत्त्व से आप्लावित होता है और उसमें प्रज्ञा का उदय होता है। सम्यक रूप से प्रज्ञा का आविर्भाव होने के कारण इसे सम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं। यह इसलिए भी सम्प्रज्ञात है कि इसमें ध्येय विषय की चेतना बनी रहती है।

असम्प्रज्ञात समाधि- यह समाधि ऐसी एकाग्रता है जिसमें कोई भी चित्तवृत्ति उपस्थित नहीं रहती। इसमें चित्त की एकाग्रता के आलम्बन के रूप में स्थूल एवं सूक्ष्म सभी विषयों का अभाव होता है। सम्प्रज्ञात समाधि के उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि उसके विभिन्न प्रकारों में आलम्बन के रूप में कोई सथूल या सूक्ष्म विषय अवश्य उपस्थित होता है। असम्प्रज्ञात समाधि में कोई भी आलम्बन अवशिष्ट नहीं होता। चित्त की ऐसी निरालम्ब अवस्था में केवल पूर्वज्ञान के संस्कार अवशिष्ट रहते हैं। व्यासभाष्य में इसे निर्बीज समाधि कहा गया है, क्योंकि इसमें चित्त में आलम्बनरूप विषय का अभाव होता है। इसमें कुछ संस्कार अवश्य अवशिष्ट रहते हैं किन्तु उनका मूल नष्ट हो जाता है। भोज के अनुसार पूर्ण असम्प्रज्ञात समाधि में सभी संस्कार नष्ट हो जाते हैं।इसके विपरीत, व्यास और वाचस्पति मिश्र के अनुसार इस अवस्था में भी संस्कार बने रहते हैं, किंतु मोक्ष के लिए उनका भी दूर होना आवश्यक है। योगसूत्र का कथन है कि जब अन्तर्दृष्टि के अवचेतनावस्थागम संस्कार का भी शमन हो जाता है तब योगी निर्बीज समाधि को प्राप्त कर लेता है। निर्बीज समाधि चित्त के पूर्ण निरोध की अवस्था है जिसको प्राप्त कर लेने पर पुरूष के लिए चित्त का पूर्ण अभाव हो जाता है और वह प्रकृति के सम्पर्क से मुक्त होकर अपने वास्तविक रूप में अवस्थित होता है। इस अवस्था में आत्मा विषय-संसार से मुक्त होकर अपने चैतन्य स्वरूप में अवस्थित हो जाता है और सभी दुःखों का अभाव हो जाता है।

वस्तुतः अष्टांग योग पद्धति के उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि उनकी साधना पद्धति का आधार संयम है। उसमें शरीर-मन-इन्द्रिय-कर्म के संयम पर बल दिया जाता है। संयम को महत्व देने के कारण इसका नैतिक मूल्य सर्वातिशायी हो जाता है। यह भौतिक और मानसिक अनुशासन द्वारा संयमित जीवन-यापन का उपदेश देकर साधक को समाधि के लिए तैयार करके कैवल्य प्राप्त कराना चाहता है। योग दर्शन का यह दृष्टिकोण है कि मनुष्य का चित्त विचारों की एक श्रृंखला है जिसे खाली रखने पर वह नकारात्मक तत्वों से घिर जाता है एवं स्वयं के मन, आत्मा और शरीर को क्षति पहुँचाता है।

जब हम चित्त को उसके विषयों से रहित कर देते हैं तो उसकी चेष्टा निरूद्ध होकर अकर्मण्यता की स्थिति में पहुँच जाती है। इसमें चित्त तो निराश्रय हो जाता है, किन्तु आत्मा स्वस्थ रहती है। यह एक ऐसी रहस्यमय अवस्था है जो प्रगाढ़ एकाग्रता के फलस्वरूप प्राप्त

© Eureka Journals 2021. All Rights Reserved.

होती है। पतंजलि के योग के सूत्र वास्तव में मन, आत्मा एवं शरीर को संतुलित रख परम लक्ष्य की प्राप्ति अग्रसर होने का एक वैज्ञानिक तरीका है। योग द्वारा लौकिक एवं परमार्थिक तत्वों को साधने के कारण ही आज वैश्विक स्तर पर योग की महत्ता बढ़ती जा रही है। 21 जून को अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस के रूप में मनाना वास्तव में योग एवं महर्षि पतंजलि के अमूल्य योगदानों को ही परिलक्षित करता है।

सन्दर्भ

1. सी0 डी0 शर्मा (2018), ए क्रिटिकल सर्वे ऑफ इंडियन फिलॉसफी, बाबूलाल बनारसीदास पब्लिकेशन्स, दिल्ली।
2. राममूर्ति पाठक (2004), भारतीय दर्शन की समीक्षात्मक रूपरेखा, अभिमन्यु प्रकाशन, इलाहलबाद।
3. डा0 राधाकृष्णन(2015), भारतीय दर्शन, भाग-2, राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली।
4. प्रो0 संगमलाल पाण्डेय(1965), भारतीय दर्शन का सर्वेक्षण, सेण्ट्रल पब्लिसिंग हाउस, दिल्ली।
5. योगसूत्र, 2/32
6. योगसूत्र, 1/22
7. योगसूत्र, 2/31
8. योगसूत्र, 2/30
9. भोजवृत्ति, 1/18
10. https//hindi.yogkala.com.

© Eureka Journals 2021. All Rights Reserved.